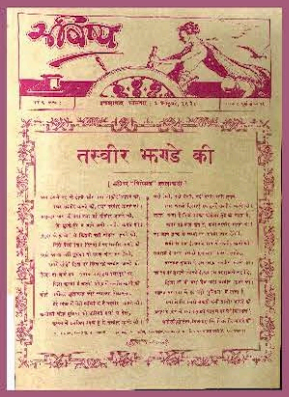

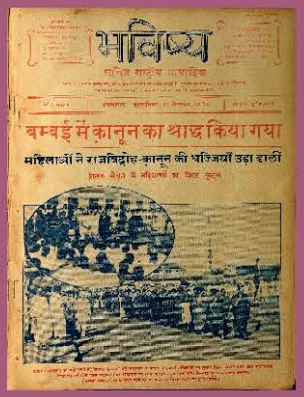

लमही

अप्रैल-जून 2024

ISSN 2278-554- X Lamahi
UGC Care Listed

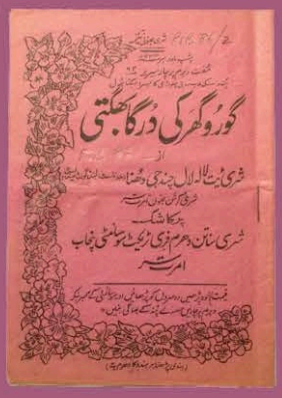

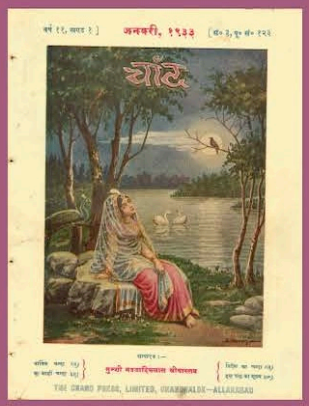

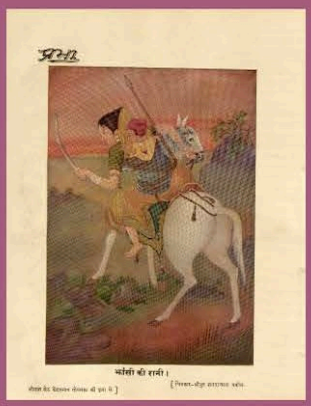

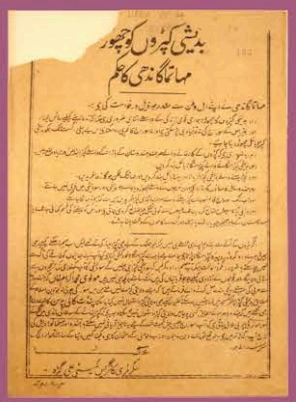

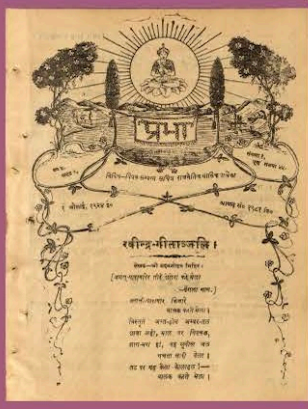

प्रतिबंध और प्रतिरोध/1850-1947

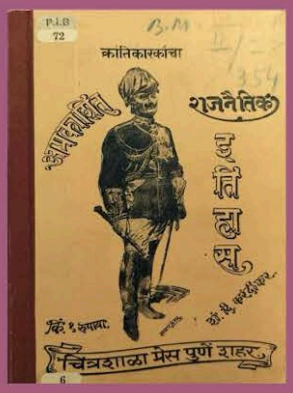

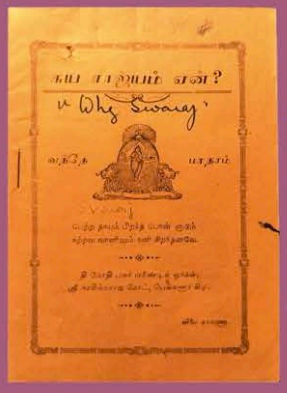

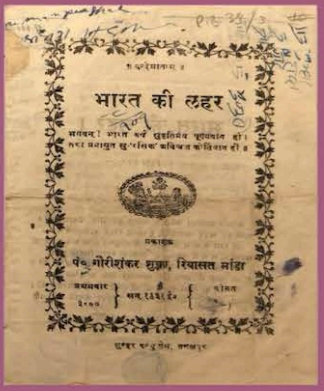

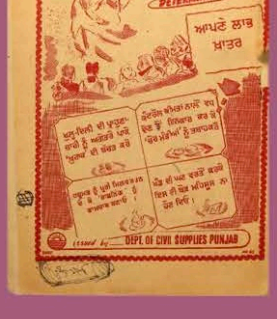

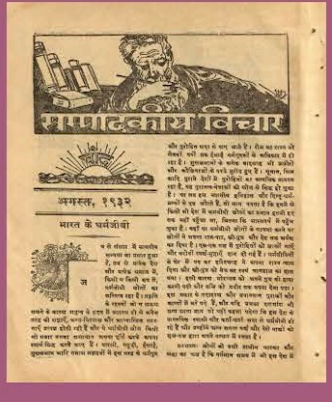

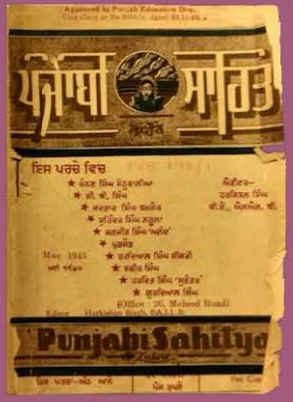

मूल्य : 150/- रुपये मात्र

प्रधान संपादक*
विजय राय

संपादक*
ऋत्विक राय

संयुक्त संपादक*
ऋतिका
वत्सल कक्कड़

इस अंक के अतिथि संपादक*
गजेंद्र पाठक
रविकान्त

सह-संपादक*
आशुतोष कुमार पाण्डेय

संपादन सहयोग*
मृत्युंजय
पंकज यादव
कुमुद रंजन
विकास शुक्ल
मोहम्मद नौशाद

आवरण और साज-सज्जा
मृत्युंजय चटर्जी

टंकण
चंदन शर्मा

संपादकीय एवं व्यवस्थापकीय संपर्क
3.343, विवेक खंड, गोमती नगर
लखनऊ-226016 उत्तर प्रदेश
ईमेल: vijairai.lamahi@gmail.com
मो॰ 9454501011

इस अंक का मूल्य : 150/- रुपये मात्र

लमही का वेब अंक आप
www.notnul.com पर पढ़ सकते हैं।

प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। इनसे त्रैमासिक पत्रिका 'लमही' और उसके संपादक मण्डल का सहमत होना अनिवार्य नहीं है। समस्त विवादों का न्याय क्षेत्र लखनऊ होगा।
लमही की स्वत्वाधिकारी, मुद्रक एवं प्रकाशक मंजरी राय के लिए श्रीमंत शिवम् आर्ट्स, 211 पाँचवीं गली, निशातगंज, लखनऊ से मुद्रित तथा 3/343, विवेक खण्ड, गोमती नगर, लखनऊ-226010 से प्रकाशित।

*सभी अवैतनिक

वर्ष: 16, अंक: 4, अप्रैल-जून 2024
UGC Care Listed

प्रतिबंध और प्रतिरोध
1850-1947

प्रतिष्ठित संस्थान
INSTITUTION OF EMINENCE

celebrating 60 years
1963-2023

सम्पादकीय व आभार

‘लमही’ का यह अंक उस अकादमिक यात्रा की एक उपलब्धि है जिसकी शुरुआत हमने औपनिवेशिक काल में प्रतिबंधित हिन्दुस्तानी लेखन को समर्पित एक शोध परियोजना के रूप में की थी। उस वक़्त अपना देश कोरोना के महामसान से निकल कर आज़ादी का अमृत महोत्सव मना रहा था। विडंबना यह थी कि हमारे शोध के लिए अनिवार्य और अपेक्षित प्राथमिक स्रोत जिस ब्रिटिश लाइब्रेरी में मौजूद थे, वह अनिश्चित काल के लिए बंद थी। देश के जिन अभिलेखागारों में हमें जाना था, उनकी स्थिति भी वही थी। हमने अपनी शोध रणनीति में संशोधन करते हुए इस विषय से जुड़े विशेषज्ञों से संपर्क करना शुरू किया और इसी प्रक्रिया में ऑनलाइन विचार गोष्ठियों का सिलसिला शुरू हुआ। हमारी इस शोध परियोजना ने हिन्दी विभाग, हैदराबाद विश्वविद्यालय और भारतीय भाषा कार्यक्रम, सीएसडीएस, दिल्ली के बीच ऐसा साझा मंच तैयार किया जिससे न सिर्फ़ भौगोलिक दूरी कम हुई बल्कि ज्ञान के कई अनुशासन और ज़ुबानें भी एक मंच पर आईं। इनके सहारे हम ब्रिटिश उपनिवेशवाद की रणनीति की व्यापक और गहरी पड़ताल करने में सक्षम हो सके। लूट और झूठ से लैस साम्राज्यवादी षडयंत्र को बेनक़ाब करने वाली परंपरा को केंद्र में रखकर हमने अनेक व्याख्यानमालाओं के साथ एक अन्तरराष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन भी किया। इस संगोष्ठी ने प्रतिबन्ध की राजनीति के उन अंतरराष्ट्रीय संदर्भों को हमारे सामने रखा, जिन्हें सिर्फ़ एक देश विशेष की परिधि में क़ैद होकर नहीं समझा जा सकता था।

महामारी के बाद जब दुनिया खुली तो हम प्रतिबंधित भारतीय लेखन के विशाल भंडार ब्रिटिश लाइब्रेरी, लन्दन में अपने पुरखों की थाती तक पहुँचे। यह देखकर हमें विस्मय हुआ कि पीले पड़ चुके पन्ने रसायनों के कवच में दीमकों से अपनी जंग के बावजूद बेसब्री से हमारी

प्रतीक्षा में थे। अधिकांश किताबें पहली बार हमारी आँखों और कैमरों की रौशनी में थीं। ब्रिटिश लाइब्रेरी ने हमारे पुरखों के संघर्ष की निशानी को जिस तरह बचा और सहेज कर रखा है उसके लिए हम उनके प्रति शुक्रगुज़ार हैं। सैकड़ों लिफ़ाफ़ों में हमें अनेक ऐसे कवि मिले जो कविता के इतिहास में अमर होने की कामना लिए नहीं लिख रहे थे। वे अपनी जान की बाज़ी लगाकर सिर्फ़ देश की आज़ादी का स्वप्न देख रहे थे, उस मुहिम को मज़बूती दे रहे थे। वे छंद और अलंकार से बेख़बर नहीं थे लेकिन छंद-अलंकार और बारीक सौंदर्यबोध उनकी प्राथमिकता न थे। वे देश के दुर्दिन को आवाज़ देना चाहते थे। इनमें से अधिकांश को लोक-संस्कृति में समादृत आल्हा छंद प्रिय था, जो वीर-रस और जागरण का छंद माना जाता रहा है। विडम्बना है कि देश और साहित्य के इतिहासलेखन में आधुनिकता और नवजागरण जैसी अवधारणाओं का ज़ोर रहा, लेकिन उसमें से वही लोग ग़ायब हो गए जिनकी रचनाओं में देश की सीधी, बेलागलपेट पीड़ा सुनाई पड़ती है। इतिहास के साथ-साथ हमने इस परियोजना में भूगोल का भी ध्यान रखा और यह हमारे लिए कौतूहल का विषय रहा कि एक ही लोकवृत्त में होने के बावजूद उर्दू में राष्ट्रीय चिंता का स्वर अधिक मुखर और उग्रतर था। मसलन, 'पयामे आज़ादी' के संपादक को ही फाँसी पर नहीं लटकाया गया बल्कि जिनके घरों में उसके अंक पाए गए, उन्हें भी फाँसी पर लटका दिया गया। हिक्की के 'बंगाल गजट' से होते हुए राजा राममोहन राय के 'मिरात-उल-अख़बार' के बाद 'पयामे-आज़ादी' की ज़ब्ती इतिहास के साथ-साथ प्रतिबन्ध के मानचित्र में व्यापक परिवर्तन का भी सूचक है।

इस अंक के पहले ही आलेख में रविभूषण जी ने औपनिवेशिक काल में प्रतिबंधन के भौगोलिक मानचित्र की बात उठाई है। आज हम औपनिवेशिक काल के प्रतिबंधित लेखन की बात करते हैं तो काज़ी नजरुल इस्लाम और मिर्ज़ा कलीच बेग का नाम तक नहीं लेते। रविभूषण जी ने लिखा है कि "मुझे ऐसा लगता है कि भारतीय कवियों में और लेखकों में शायद

नजरुल अकेले व्यक्ति हैं, जिनकी कई किताबों पर, संभवतः पाँच-छः किताबों पर प्रतिबन्ध लगा था।" लगभग यही स्थिति सिंधी के महान लेखक मिर्जा कलीच बेग की है। उनका निष्कर्ष है कि शब्द सत्ता राज्य सत्ता के कभी अधीन नहीं होती। प्रतिबंधित साहित्य की शब्द सत्ता से गुज़रते हुए ब्रिटिश शासन और ब्रिटिश राज्य का चरित्र हमारे समक्ष स्पष्ट होता है।

लमही के प्रधान संपादक श्री विजय राय ने 'प्रतिबंधित क्रांतिचेता साहित्य की मार्मिक कथा' के अंतर्गत इतिहास और भूगोल के व्यापक वृत्त में प्रतिबंधित लेखन का जो मानचित्र प्रस्तुत किया है, उसमें रवीन्द्रनाथ ठाकुर, विनायक दामोदर सावरकर, प्रेमचंद, लाला लाजपत राय, मदन मोहन मालवीय, भगवानदास माहौर, गणेश शंकर विद्यार्थी जैसे लेखक मौजूद हैं। व्याकरणाचार्य किशोरीदास वाजपेयी की किताब प्रकाशित होते ही ज़ब्त कर ली गयी थी। विजय राय ने लिखा है कि "आचार्य वाजपेयी ने अपनी इस पुस्तक को पं. मदन मोहन मालवीय को समर्पित किया था। मालवीय जी पुस्तक पढ़कर हँसे और बोले- बड़ा तेज बघार लगाया है मिर्चों का। जीरा आदि का बघार देते तो अच्छा रहता। इस पर वाजपेयी जी ने हाथ जोड़कर कहा- महराज, भूतों को भागने के लिए मिर्चों की धूनी ठीक रहती है।" मज़े की बात है कि यह किताब छंद-अलंकार का विश्लेषण करने वाली सौंदर्यशास्त्रीय आलोचना थी, जिसकी ज़्यादातर मिसालें ख़ुद वाजपेयी जी ने गढ़ी थीं। एक हद तक इस रचनात्मक चतुराई की तुलना हम पंडित प्रदीप द्वारा लिखे गए सन तैंतालीस की फ़िल्म क़िस्मत के 'आयटम देशभक्ति गीत' से कर सकते हैं, जो प्रशासन को धूल झोंकने में सफल रहा था। क्योंकि यह फ़िल्म रॉक्सी सिनेमा हॉल में इतनी बार देखी गयी कि रिकॉर्ड बन गया, जिसे बहुत बाद में, शोले, ने तोड़ा।

'औपनिवेशिकता, प्रतिबंधन और पथ पर प्रतिवाद' आलेख में प्रो. संतोष भदौरिया ने विस्तारपूर्वक ब्रिटिश साम्राज्य के गलाघोंटू क़ानूनों और उनसे लोहा लेते भारतीय अख़बारों/पत्रिकाओं की दृढ़ इच्छाशक्ति का विशद विवेचन किया है। अंग्रेज़ी और हिन्दी पत्रकारिता के

मूलभूत चरित्र के बीच अंतर स्पष्ट करते हुए उन्होंने बताया है कि अंग्रेज़ी अख़बारों ने न केवल डायर और ओ'डायर को क्षमादान दिया अपितु फ़ौजी शासन को उचित भी ठहराया, जबकि हिन्दी की पत्र-पत्रिकाओं ने इनके कार्यों की कटु आलोचना की।

प्रो. निशांत कुमार उपनिवेशवाद के संदर्भ में प्रो. पार्थ चटर्जी की आध्यात्मिक अंदरूनी और भौतिक बैरूनी वाली अवधारणा के द्वित्व का संदर्भ लेते हुए यह बताते हैं कि "हम यह मान कर चलते हैं कि राष्ट्रवादी लोग हर तरह के प्रतिबंध के ख़िलाफ़ थे, पर क़ानून और राज्य के संबंध में इस सरलीकरण से बचना चाहिए। तभी हम प्रतिबंधन और प्रतिबंधित के खेल की जटिलता को समझ पाएँगे।" डॉ. मृत्युंजय ने 'प्रतिबंधित साहित्य का देशकाल और कैनन' में एक बड़ा सवाल उठाया है जिसका संबंध वर्चस्व की अवधारणा से है। वाल्टर बेंजामिन के हवाले से उनका यह कहना उल्लेखनीय है कि "पुरानी कृतियों का 'प्रभामंडल' टूट गया और एक नए क़िस्म का प्रभामंडल बना। नतीजतन छापाख़ाने के आगमन के साथ प्रतिबंधन की भी नयी व्यवस्था बनी।" डॉ. अखिल मिश्र ने अपने लेख में प्रतिबंधित साहित्य की परंपरा को आधुनिक हिन्दी साहित्य के इतिहास की मुख्यधारा मानते हुए हिन्दी के शोधार्थियों से देश और दुनिया के अनेक संग्रहालयों में पड़ी हुई प्रतिबंधित साहित्य की अमूल्य निधि की तरफ़ ध्यान देने का आह्वान किया है।

इस अंक का दूसरा खंड भारतीय लोक मानस में मौजूद ब्रिटिश साम्राज्यवाद के प्रति क्षोभ और प्रतिरोध की परम्परा से जुड़ा है। प्रो. विद्या सिन्हा ने अपने आलेख में भोजपुरी लोक साहित्य में ब्रिटिश उपनिवेशवाद के प्रतिकार की लम्बी परम्परा का आलोचनात्मक विश्लेषण किया है। उनकी स्पष्ट राय है कि भोजपुर, छपरा, सारण और चंपारण में छोटे किसानों और मज़दूरों पर ब्रिटिश उपनिवेशवाद के अत्याचार ने जो स्थिति पैदा की, उसका वास्तविक प्रमाण अभी भी इतिहास की किताबों में नहीं बल्कि लोक साहित्य में है। 'फिरंगिया' से लड़ते हुए

‘कुँवर सिंह’ और ‘फतेह बहादुर साही’ ने जो पराक्रम दिखाया, उसकी तस्वीर लोकमानस में अभी भी मौजूद है। रणजीत गुहा और पंकज राग के हवाले से उन्होंने 1857 में भोजपुरी भाषी जनता की भूमिका को ‘हिस्ट्री फ्रॉम बिलो’ के रूप में विश्लेषित किया है। उपरोक्त कविताओं के प्रतिबन्ध की कहानी पर भी उन्होंने विस्तारपूर्वक विचार किया है। मढौरा की घटना का शोधपरक विश्लेषण भी इस शोध आलेख का विशेष प्रदेय है।

सुप्रसिद्ध अभिलेखागार विशेषज्ञ श्री राजमणि ने ‘प्रतिबंधित साहित्य में लोक गीतों की झंकार’ शीर्षक अपने लेख में हिंदी के साथ-साथ अन्य भारतीय भाषाओं में प्रतिबंधित लोकगीतों की लोकप्रियता और संगीतमयता पर प्रकाश डालते हुए इन्हें स्वाधीनता आन्दोलन की चेतना के प्रसार में बेहद महत्वपूर्ण माना है। उन्होंने प्रतिबन्धित लोकगीतों के गुमनाम रचनाकारों पर शोध को अपने समय की एक महत्वपूर्ण अकादमिक ज़िम्मेदारी के रूप में रेखांकित किया है।

डॉ. भीम सिंह ने ‘राजपूताना में प्रेस, भाषा, शिक्षा का प्रसार और प्रतिबंधन की राजनीति’ के अंतर्गत राजस्थान के व्यापक मानचित्र पर ब्रिटिश साम्राज्यवाद के सितम के बरक्स लोक प्रतिकार की सुदीर्घ परम्परा का विश्लेषण किया है। वे बताते हैं कि विजयसिंह पथिक और सागरमल गोपा सरीखों का योगदान कभी भुलाया नहीं जा सकता। इसी खंड में डॉ. शुभनीत कौशिक ने राष्ट्रीय आन्दोलन में भोजपुरी के प्रतिबंधित साहित्य के योगदान का विस्तारपूर्वक विवेचन करते हुए यह रेखांकित किया है कि राजनीति के साथ ही सामाजिक सुधार और धार्मिक पाखण्ड का विरोध भी भोजपुरी लोक साहित्य की चिंता के केंद्र में रहा है। उज्ज्वल कुमार सिंह ने ‘लोकगीतों में प्रतिबन्ध और लोकवृत्त का दिलचस्प आख्यान’ शीर्षक लेख में इस खंड की मूल चिंता को ही विस्तार दिया है।

इस अंक का तीसरा खंड, जिसका शीर्षक "हिंदी से आगे..." है, हिंदी की परिधि पर अवस्थित अन्य भारतीय भाषाओं में प्रतिबंधित रचनाओं पर केन्द्रित है। इस खंड में प्रो. शशि मुदिराज और प्रो. सी. अन्नपूर्णा ने तेलुगु की दो अमूल्य प्रतिबंधित कृतियों के महत्त्व का विवेचन-विश्लेषण किया है। प्रो. सुमन जैन ने *हिन्द स्वराज* और प्रो. निरंजन सहाय ने महर्षि अरविंद की प्रतिबंधित संस्कृत कविता पर गंभीरतापूर्वक विचार किया है। प्रो. जाहिदुल हक़ ने उर्दू की प्रतिबंधित शायरी का और डॉ. प्रियदर्शिनी ने मंटो की प्रतिबंधित रचनाओं का समग्र ऐतिहासिकता में विश्लेषण किया है। इसी खंड के अंतर्गत डॉ. जे. आत्माराम ने क्रांतिकारी कवि मख़दूम की अचर्चित प्रतिबंधित रचना 'हैदराबाद' और सुश्री मंजना कुमारी ने पंजाबी के प्रतिबंधित साहित्य पर विचार किया है।

इस विशेषांक का चौथा खंड हिंदी की प्रतिबंधित कविताओं के प्रतिरोधी स्वर पर केन्द्रित है। इस खंड में डॉ. राजवंती मान, डॉ. प्रदीप त्रिपाठी एवं सुश्री प्राची चौधरी के लेख प्रतिबंधित कविता में राष्ट्रीय चेतना, आत्म जागरण और लोकतांत्रिक मूल्यों के वैशिष्ट्य को रेखांकित करते हैं। पाँचवें खंड में श्री प्रदीप जैन ने *सोज़े वतन,* श्री रुस्तम राय ने प्रतिबंधित गद्य, प्रो. संजीव दुबे ने उग्र की कहानियों, प्रो. अमित मिश्र ने प्रतिबंधित प्रवासी साहित्य, डॉ. मधुलिका बेन पटेल ने 'आगरा सत्याग्रह संग्राम' और सुश्री कैसर साबिदा सुल्ताना ने *देश की बात* पर लिखा है। छठा खंड कैथरीन मेयो की विवादास्पद किताब *मदर इंडिया* पर केन्द्रित है जिसमें डॉ. सुमन यादव और अजित आर्या के आलेख शामिल हैं। सातवाँ खंड *चाँद* के ऐतिहासिक 'फाँसी अंक' को समर्पित है जिसमें प्रो. आशुतोष पार्थेश्वर, प्रो. नीलम राठी, एकता वर्मा और गौरव सिंह के आलेख मौजूद हैं।

आठवें खंड 'मंच और प्रतिबन्ध' में दो आलेख हैं। पहला आलेख डॉ. प्रकाश कोपेर्डे का है जिन्होंने 1875 से 1990 के बीच के मराठी नाटकों पर और सत्यभामा ने ड्रैमैटिक परफॉरमेंस

ऐक्ट, पारसी रंगमंच और स्वाधीनता आन्दोलन के आपसी रिश्तों पर लिखा है। इस अंक में प्रकाशित अधिकांश आलेख हैदराबाद विश्वविद्यालय और सीएसडीस की हमारी संयुक्त शोध परियोजना के अंतर्गत आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी में प्रस्तुत शोध पत्रों के सम्पादित या विस्तारित रूप हैं। अन्य आलेख हमारे विशेष आग्रह पर लिखे गए हैं। हम इस पत्रिका में शामिल सभी लेखकों के प्रति हार्दिक आभार प्रकट करते हैं। साथ ही हम उनसे क्षमा भी चाहेंगे जिनके आलेख इस अंक में शामिल नहीं हो सके।

नवाँ खंड, 'धरोहर', कुछ ज़ब्तशुदा पर्चों, किताबों और पत्रिकाओं की दृश्यात्मक झाँकी पेश करता है, ताकि हम प्रतिबंधित छप-संस्कृति के अलग-अलग स्तरों और प्रकारों से रूबरू हो सकें। रामरख सिंह सहगल के 'चाँद' घराने से 'भविष्य' नामक अख़बार भी गांधी जी के सविनय अवज्ञा आंदोलन के सघन घटनाप्रधान दो सालों में निकला। उसके पन्नों पर पहली बार हमें राजनीतिक जनपद में मुख़्तलिफ़ उम्र की इतनी सारी जुझारू महिलाओं के दर्शन होते हैं; अलग-अलग जगहों से आंदोलनों, ग़िरफ़्तारियों की रपटें लगातार मिलती हैं; भगत सिंह और अन्य क्रांतिकारियों के केस की 'लाइव कमेन्ट्री' धारावाहिक रिपोर्ताज की शक्ल में मिलती है; साम्राज्यवाद, पुरूष-सत्ता व जातिवादी वर्चस्व तथा छूआछूत के ख़िलाफ़ दिलचस्प कार्टून मिलते हैं, और सबसे मानीख़ेज़ बात कि प्रतिबंध की कार्रवाइयों के ख़िलाफ़ मुखपृष्ठ को ख़ाली छोड़ देने के रिवायत की शुरुआती मिसाल मिलती है। प्रभा' का झंडा अंक, जिसमें राष्ट्रीय झंडा फहराने जैसी 'स्वाभाविक' गतिविधि के लिए जेल भेजे जाने और लाठी-गोली खाने की मिसालों की तफ़्सीलात हैं। सबॉल्टर्न इतिहासकार शाहिद अमीन ने 'गाँधी का माहात्म्य' लिखकर गोरखपुर से निकलनेवाले 'स्वदेश' नामक पत्र को भी मशहूर कर दिया है। इसके पीडीएफ़ अंक भी उन्होंने हमसे साझा किए हैं जो हम आगे आर्काइव.ऑर्ग पर अपलोड

कर देंगे। मशहूर लेखक प्रियंवद ने 'भविष्य' और 'चाँद' की फ़ाइलें हमें दी थीं, उनका एक बार फिर शुक्रिया।

अंक के तैयार होते-होते चंबल आर्काइव्स, इटावा के श्री कृष्णा पोरवाल साहब ने हमें उसी दौर, यानि 1931, के कानपुर से छपा एक पर्चा मुहैया कराया है, जो पढ़ने से ताल्लुक़ रखता है, इसलिए हमने अपने टंकण में इसे ज्यों का त्यों संरक्षित रखा है। किस-किस ढब के लोकगीत रचे जा रहे थे, यह संकलन उसका अच्छा नमूना है। इस पुस्तिका में गांधी, नेहरू, पटेल के विचारों -- अहिंसा, स्वराज, स्वदेशी, हिन्दू-मुस्लिम एकता -- को तथा सबंधुबांधव भगत सिंह तथा गणेशशंकर विद्यार्थी की क़ुर्बानियों का वास्ता दिया गया है। तर्ज़ और टेक से लैस इस हिन्दुस्तानी पुस्तिका में यह भी ज़िक्र है कि ये गीत कीर्तन मंडलियों द्वारा बाक़ायदा एक शुल्क लेकर गाये जाते थे।

हमारी शोध परियोजना की धुरी और इस अंक के सह-संपादक डॉ. आशुतोष पाण्डेय की संयोजन क्षमता के प्रति आभार केवल रस्मी औपचारिकता नहीं है। पत्रिका के लिए दिन-रात का भेद भूलकर जिस तरह पंकज, कुमुद और विकास ने काम किया, उसके प्रति आभारस्वरुप कुछ भी कहना उनके योगदान को कमतर ही करना है। श्री मृत्यंजय चटर्जी ने पत्रिका की डिज़ाइन पर काम करके इसे देखने लायक़ बनाया, चंदन शर्मा ने टंकण में, अयोध्या वर्मा ने ऑनलाइन आयोजनों में सहयोग किया। श्री नीलाभ ने अपने ऑनलाइन मंच नॉटनल से इसे पूरी दुनिया में उपलब्ध कराया है। डॉ. नौशाद ने इस परियोजना, ख़ासकर पोस्टर प्रदर्शनी में जिस तरह योगदान किया, वह भी उल्लेखनीय है। सबके प्रति हमारा हार्दिक आभार।

श्री विजय राय ने अतिथि संपादक के रूप में ‘लमही’ का यह मंच हमें सौंपकर हम पर जो विश्वास प्रकट किया उसके प्रति किन शब्दों में आभार व्यक्त करें, यह समझ में नहीं आ रहा।

प्रतिबंधित साहित्य पर ‘उत्तर प्रदेश' पत्रिका का विशेषांक बेहद महत्वपूर्ण था, इसके बावजूद वे इस काम के प्रेरणास्रोत बने। हमारा यह प्रयास उनकी इसी निष्ठा का सुफल है।

अंत में ब्रिटिश लायब्रेरी, लन्दन, हैदराबाद विश्वविद्यालय, हैदराबाद और सीएसडीएस, दिल्ली के प्रति समवेत आभार जिनके सहयोग के बग़ैर न सिर्फ़ हमारी शोध परियोजना बल्कि यह अंक भी इस रूप में संभव नहीं था। ख़ास तौर पर सीएसडीएस के निदेशक प्रोफ़ेसर अवधेन्द्र शरण, हमें आपस में मिलवाने वाले डॉ. राकेश पांडेय और हमारी हर गुहार पर बौद्धिक मदद को आगे आने वाले डॉ. प्रभात कुमार के हम तहेदिल से शुक्रगुज़ार हैं।

सादर

गजेन्द्र एवं रविकान्त

अतिथि संपादक

सूची

खंड-1: है क़लम बँधी स्वच्छंद नहीं

उपनिवेशवाद और प्रतिबंधन 15

रविभूषण

स्वाधीनता संघर्ष में प्रतिबंधित क्रांतिचेता साहित्य की मार्मिक कथा 24

विजय राय

उपनिवेशवाद के सन्दर्भ में प्रतिबंधित प्रकाशन 33

निशांत कुमार

प्रतिबंधित साहित्य का देश-काल और 'कैनन' 41

मृत्युंजय

सत्ता का प्रतिरोधी स्वर: प्रतिबंधित साहित्य 56

अखिल मिश्र

प्रतिबंधित हिन्दी साहित्य में अभिव्यक्त लोकतांत्रिक मूल्य 65

प्राची चौधरी

खंड- 2: लोक और प्रतिरोध

प्रतिबंधित भोजपुरी लोक साहित्य 77

विद्या सिन्हा

प्रतिबंधित साहित्य में लोक गीतों की झंकार 92

राजमणि

राष्ट्रीय आंदोलन और भोजपुरी का प्रतिबंधित साहित्य 131

शुभनीत कौशिक

लोकगीतों में प्रतिबन्ध और लोकवृत्त का दिलचस्प आख्यान 146

उज्ज्वल कुमार सिंह

सागरमल गोपा और रघुनाथ सिंह का मुकदमा 165

रामप्यारी

राजपूताना में प्रेस, भाषा, शिक्षा का प्रसार और प्रतिबंधन की राजनीति 188

भीम सिंह

खंड -3: हिन्दी जनपद से आगे

प्रतिबंध का प्रपंच 202

शशि मुदीराज

तेलुगु का प्रतिबंधित उपन्यास : मालपल्ली 220

अन्नपूर्णा. सी

अरिमर्दन हेतु मातृ आह्वान 228

निरंजन सहाय

उर्दू की प्रतिबंधित शायरी : एक अध्ययन 243

मो. जाहिदुल हक

सआदत हसन मंटो : प्रतिबंधों से परे 256

प्रियदर्शिनी

पंजाबी का प्रतिबंधित साहित्य 266

मंजना कुमारी

'हैदराबाद' : मख़दूम मोहिउद्दीन की प्रतिबंधित पुस्तक 280

जे. आत्माराम

खंड-4: हिन्दी कविता का प्रतिरोधी स्वर

'स्व' का जागरण और ब्रिटिशकालीन प्रतिबंधित गीत 290

प्रदीप त्रिपाठी

प्रतिबंधित साहित्य में राष्ट्रीय चेतना 301

राजवन्ती

खंड-5: जीवन संग्राम की भाषा

प्रेमचंद का 'सोज़े वतन' 314

प्रदीप जैन

स्वाधीनता आंदोलन और प्रतिबंधित गद्य साहित्य 321

रुस्तम राय

पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' की प्रतिबंधित कहानियाँ 330

संजीव कुमार दुबे

उपनिवेश काल में प्रतिबन्ध और प्रवासी साहित्य 341

अमित कुमार मिश्र

औपनिवेशिक भारत में साहित्यिक प्रतिबंध की संस्कृति और 'देश की बात' 353

कौसर साबिदा सुलताना

आज़ादी के संघर्ष का दहकता दस्तावेज़ : 'आगरा सत्याग्रह संग्राम' 362

मधुलिका बेन पटेल

खंड-6: मदर इंडिया

'मदर इंडिया' और बीसवीं सदी के बुद्धिजीवी 384

सुमन कुमारी

औपनिवेशिक इतिहास लेखन और मिस कैथरीन मेयो की 'मदर इंडिया' 400

अजीत आर्या

खंड-7: हिन्दी पत्रकारिता

'चाँद' का फाँसी अंक : ज़ब्ती का ब्यौरा 422

आशुतोष पार्थेश्वर

चाँद के 'फाँसी' अंक में प्रतिबिंबित स्वाधीनता आंदोलन की छवियाँ 462

एकता वर्मा

रामरख सिंह सहगल 480

गौरव सिंह

खंड- 8: मंच और प्रतिबंध

प्रतिबंधित मराठी नाटक (1875 से 1910 तक) 498

प्रकाश कोपार्डे

ड्रामेटिक परफ़ोर्मेंस एक्ट, पारसी रंगमंच और स्वतन्त्रता आंदोलन 523

सत्यभामा

खंड-9: धरोहर **546**